

अध्याय 4: ज्ञानकर्मसंन्यासयोग

ईश्वर का दिव्य अवतार, कर्म की त्रिविध गति और ज्ञानयज्ञ | कुल श्लोक: 42

श्रीमद्भगवद्गीता का चौथा अध्याय 'ज्ञानकर्मसंन्यासयोग' (Jnana Karma Sannyasa Yoga) कर्म और ज्ञान के अद्भुत मिलन का पर्व है। तीसरे अध्याय में हमने निष्काम कर्म की अनिवार्यता को समझा। परंतु कर्म करते समय मनुष्य के मन में यह प्रश्न उठता है कि—"कर्म के बंधन से अंततः पूर्ण मुक्ति कैसे मिले?" इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण समझाते हैं कि जब कर्म को **ज्ञान की अग्नि** में भस्म कर दिया जाता है, तब किया गया हर कर्म बंधनमुक्त हो जाता है। इसी अध्याय में भगवान अपने दिव्य जन्म और अवतार लेने के शाश्वत नियमों का रहस्य भी उद्घाटित करते हैं।

अध्याय 4 का केंद्रीय सूत्र: ज्ञान के बिना किया गया कर्म केवल यांत्रिक परिश्रम (Mechanical Labor) है, और कर्म के बिना ज्ञान केवल कोरी कल्पना है। जब कर्म, ज्ञान और त्याग एक साथ मिलते हैं, तभी मनुष्य जीवन के परम कल्याण को प्राप्त करता है।

1. गीता का प्राचीन इतिहास: सूर्य-परंपरा की निरंतरता

अध्याय के आरंभ में ही भगवान श्रीकृष्ण एक अत्यंत विस्मयकारी बात कहते हैं। वे अर्जुन से कहते हैं कि यह अमर योग मैंने सबसे पहले सृष्टि के आरंभ में **सूर्यदेव (विवस्वान)** को सिखाया था। सूर्य ने इसे अपने पुत्र मनु को दिया और मनु ने राजा इक्ष्वाकु को उपदेश दिया। इस प्रकार राजर्षियों की यह गुरु-शिष्य परंपरा काल के प्रवाह में लुप्त हो गई थी, जिसे आज मैं तुम्हारे सम्मुख पुनः प्रकट कर रहा हूँ।

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥४.१॥
स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ॥४.३॥

सरल अर्थ: मैंने इस अविनाशी योग को सूर्य से कहा था; सूर्य ने मनु से और मनु ने इक्ष्वाकु से कहा। वही यह पुरातन योग आज मैंने तुमसे कहा है, क्योंकि तुम मेरे परम भक्त और प्रिय सखा हो; यह योग अत्यंत उत्तम और गोपनीय रहस्य है।

इस पर अर्जुन को घोर आश्चर्य होता है। वे पूछते हैं कि आपका जन्म तो अभी हाल ही में हुआ है, जबकि सूर्यदेव तो सृष्टि के आदि में उत्पन्न हुए थे; फिर मैं यह कैसे मान लूँ कि आपने यह योग सूर्य को सिखाया था? अर्जुन का यह संशय भगवान के विराट और अनादि स्वरूप को समझने की पृष्ठभूमि तैयार करता है।

2. अवतार का रहस्य: 'यदा यदा हि धर्मस्य...'

अर्जुन के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्रीकृष्ण अपने और जीवात्मा के जन्म का अंतर समझाते हैं। वे कहते हैं—"हे परंतप अर्जुन! मेरे और तुम्हारे अनेक जन्म हो चुके हैं। अंतर केवल इतना है कि मुझे उन सब का स्मरण है, परंतु तुम्हें उनका स्मरण नहीं है।"

सामान्य मनुष्य अपने पिछले कर्मों के फलों को भोगने के लिए विवश होकर जन्म लेता है, जबकि ईश्वर अपनी स्वतंत्र योगमाया से, धर्म की रक्षा हेतु स्वयं को प्रकट करते हैं। इसके बाद गीता के दो सबसे प्रसिद्ध और अमर श्लोक आते हैं:

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥४.७॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥४.८॥

सरल अर्थ: हे भारत (अर्जुन)! जब-जब धर्म की हानि (पतन) होती है और अधर्म का अभ्युत्थान (उभार) होता है, तब-तब मैं स्वयं की रचना करता हूँ (प्रकट होता हूँ)। सज्जनों और साधु पुरुषों के उद्धार के लिए, पापकर्मियों के विनाश के लिए और धर्म की भली-भांति स्थापना करने के लिए मैं युग-युग में प्रकट होता हूँ।

श्रीकृष्ण स्पष्ट करते हैं कि जो मनुष्य भगवान के इस दिव्य जन्म और अलौकिक कर्मों को तत्व से जान लेता है, वह देह त्यागने के बाद पुनः संसार के जन्म-मरण के चक्र में नहीं फंसता, बल्कि परमात्मा को ही प्राप्त हो जाता है।

3. कर्म की त्रिविध गति: कर्म, अकर्म और विकर्म

श्लोक 4.16 और 4.17 में श्रीकृष्ण कहते हैं कि बड़े-बड़े बुद्धिमान और ज्ञानी पुरुष भी यह निर्णय करने में मोहित हो जाते हैं कि वास्तव में 'कर्म' क्या है और 'अकर्म' क्या है। इसलिए कर्म की गहराई को समझना अत्यंत आवश्यक है:

प्रकार	परिभाषा एवं स्वरूप	दार्शनिक व व्यावहारिक प्रभाव
1. कर्म (Karma)	कर्तव्य और शास्त्रों के अनुकूल किया गया कार्य।	यदि फल की इच्छा से किया जाए तो पुण्य का बंधन बनता है।
2. विकर्म (Vikarma)	अधर्म, अनैतिकता और निषेध किए गए बुरे कार्य।	पाप, अशांति, मानसिक पतन और विनाश का कारण।
3. अकर्म (Akarma)	कर्म करते हुए भी फल और कर्तापन के अहंकार से पूर्ण मुक्ति।	परम स्वतंत्रता, चित्त की शुद्धि और मोक्ष की प्राप्ति।

कर्म में अकर्म देखने का गूढ़ रहस्य

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥४.१८॥

सरल अर्थ: जो मनुष्य कर्म करते हुए भी उसमें 'अकर्म' (अहंकार और फल-इच्छा का अभाव) देखता है, और जो निष्क्रिय बैठने (अकर्म) में भी कर्म (मानसिक हलचल) को देखता है, वही मनुष्यों में बुद्धिमान है और वही संपूर्ण कर्मों को करने वाला सच्चा योगी है।

इसका गहरा अर्थ यह है कि यदि कोई व्यक्ति बाहर से हाथ-पैर हिलाकर दिन-रात काम कर रहा है, परंतु उसके भीतर कोई स्वार्थ या कर्तापन नहीं है, तो वह वास्तव में कुछ नहीं कर रहा (कर्म में अकर्म)। इसके विपरीत, यदि कोई व्यक्ति काम छोड़कर चुपचाप बैठा है, परंतु उसका मन षड्यंत्र, चिंता और वासना में लिप्त है, तो वह कुछ न करते हुए भी भयानक कर्म में फंसा हुआ है (अकर्म में कर्म)।

4. ज्ञानयज्ञ का विस्तार: 12 प्रकार के आध्यात्मिक यज्ञ

अध्याय 3 में श्रीकृष्ण ने सांसारिक और सामाजिक यज्ञ की बात की थी, परंतु यहाँ वे यज्ञ को आंतरिक रूपांतरण की साधना बना देते हैं। वे बताते हैं कि भिन्न-भिन्न साधक अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार अलग-अलग यज्ञ करते हैं:

- **दैव यज्ञ:** देवताओं और दिव्य शक्तियों के प्रति कृतज्ञता से किया जाने वाला पूजन।
- **ब्रह्मार्पण यज्ञ:** समस्त कर्मों, विषयों और अस्तित्व को साक्षात् ब्रह्म मानकर समर्पित कर देना (ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविः... श्लोक 4.24)।
- **इंद्रिय संयम यज्ञ:** अपनी इंद्रियों को संयम की अग्नि में होम कर देना, अर्थात् विषयों के भटकाव से बचना।
- **प्राणायाम यज्ञ:** प्राण और अपान वायु की गति को नियंत्रित करके आंतरिक ऊर्जा को संतुलित करना।
- **द्रव्य और तपोयज्ञ:** धन-संपत्ति का जनकल्याण में दान करना और कठोर आत्म-अनुशासन का पालन करना।

ज्ञानयज्ञ की श्रेष्ठता: श्लोक 4.33 में श्रीकृष्ण स्पष्ट कहते हैं—“श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप” अर्थात् भौतिक पदार्थों से किए जाने वाले समस्त बाह्य यज्ञों की तुलना में ‘ज्ञानयज्ञ’ अत्यंत श्रेष्ठ है; क्योंकि अंततः संसार के समस्त कर्म ज्ञान में ही जाकर समाप्त होते हैं।

5. ज्ञान की प्राप्ति कैसे हो? सद्गुरु की शरण

आत्मज्ञान किसी पुस्तक को केवल पढ़ लेने से या इंटरनेट पर वीडियो देख लेने से प्राप्त नहीं होता। श्रीकृष्ण श्लोक 4.34 में ज्ञान प्राप्त करने की त्रिसूत्रीय विधि बताते हैं:

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥४.३४॥

सरल अर्थ: उस ज्ञान को तुम तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर विनम्र प्रणाम (प्रणिपात), निष्कपट जिज्ञासा व सार्थक प्रश्न (परिप्रश्न) और निष्काम सेवा (सेवा) द्वारा समझो। वे तत्व को जानने वाले महापुरुष तुम्हें उस दिव्य ज्ञान का उपदेश देंगे।

यहाँ तीन अनिवार्य शर्तें हैं:

1. **प्रणिपात (Humility):** अपने अहंकार को झुकाना। यदि पात्र सीधा नहीं होगा, तो उसमें ज्ञान की वर्षा समा नहीं सकती।
2. **परिप्रश्न (Inquiry):** कुतर्क या बहस नहीं, बल्कि सत्य को जानने के लिए हृदय की गहरी और प्रामाणिक जिज्ञासा।
3. **सेवा (Dedication):** गुरु और ज्ञान के प्रति समर्पण और कृतज्ञता का भाव।

6. ज्ञान की महिमा: पापों को भस्म करने वाली अग्नि

श्रीकृष्ण कहते हैं कि यदि कोई संसार का सबसे बड़ा पापी भी हो, तो भी वह इस आत्मज्ञान रूपी नौका द्वारा संपूर्ण पाप-समुद्र को सुगमता से पार कर सकता है:

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानान्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥४.३७॥
न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।
तत्त्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥४.३८॥

सरल अर्थ: हे अर्जुन! जैसे प्रज्वलित अग्नि काष्ठ (लकड़ियों) के बड़े-बड़े ढेरों को भस्म कर देती है, वैसे ही ज्ञान रूपी अग्नि मनुष्य के समस्त संचित कर्म-बंधनों को भस्म कर देती है। इस संसार में आत्मज्ञान के समान पवित्र करने वाला वास्तव में कुछ भी नहीं है।

7. संशय का विनाश: अज्ञान ही पतन की जड़ है

चौथे अध्याय के अंत में श्रीकृष्ण एक अत्यंत गंभीर चेतावनी देते हैं। वे कहते हैं कि जिसके भीतर श्रद्धा नहीं है और जिसका मन निरंतर संशय (Doubt) में भटकता रहता है, उसका सर्वनाश निश्चित है:

अज्ञश्चाश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति ।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥४.४०॥

सरल अर्थ: विवेकहीन, श्रद्धारहित और संशयग्रस्त मनुष्य का पतन हो जाता है। ऐसे संशययुक्त चित्त वाले व्यक्ति के लिए न यह लोक सुखदायी है, न परलोक और न ही उसे कोई वास्तविक सुख मिल सकता है।

अंतिम श्लोक (4.42) में श्रीकृष्ण अर्जुन को अंतिम आदेश देते हैं— "तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः। छित्त्वेन संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत॥" अर्थात् हे भारत! अपने हृदय में अज्ञान से उत्पन्न हुए इस संशय को आत्मज्ञान रूपी तलवार से काट डालो, समत्व योग में स्थित हो जाओ और युद्ध के लिए खड़े हो जाओ!

8. आधुनिक जीवन और युवाओं के लिए अध्याय 4 की सीख

- **Continuous Learning (सतत विद्या):** जीवन में जब भी दिशाहीन महसूस हो, तो समझें कि ज्ञान की कमी है। सही मेंटॉर (सद्गुरु) की खोज करें और खुले मन से सीखें।
- **काम को तनाव न बनाएं (Convert Work into Akarma):** अपने ऑफिस या पढ़ाई के काम को बोझ मानने के बजाय समाज और ईश्वर के प्रति एक सेवा मानकर करें। इससे बर्नआउट नहीं होगा।
- **आत्म-संशय (Self-Doubt) से मुक्ति:** अपनी क्षमताओं और सत्य पर विश्वास रखें। संशय करने वाला व्यक्ति कभी किसी बड़े लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता।

॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे । हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

Website: soniাপanghal.com